त्ति वुत्तं होदि । महव्वयविरहिददोरयणहराणं ओहिणाणीणमणोहिणाणीणं च किमट्टं णमोक्कारो ण कीरदे ? गारवगरुवेसु जीवेसु चरणाचारपयट्ठावणट्टं उत्तिमग्गविसयभत्तियपयासणट्टं च ण कीरदे । एवं देसोहिजिणाणं णमोक्कारं काऊण परमोहिजिणाणं णमोक्कारकरणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि -

णमो परमोहिजिणाणं ।। ३ ।।

परमो ज्येष्ठ; परमश्चासौ अवधिश्च परमावधिः । कधमेदस्स ओहिणाणस्स जेट्ठदा ? देसोहिं पक्खिदूण महाविसयत्तादो, मणपज्जवणाणं व संजदेसु चेव समुप्पत्तीदो सगुप्पण्णभवे चेव केवलणाणुप्पत्तिकारणत्तादो, अप्पडिवादित्तादो वा जेट्ठदा । परमावधयश्च ते जिनाश्च परमावधिजिनाः, तेभ्यो नमः । जदि देसोहिणाणादो परमोहिणाणं

....

शंका - महाव्रतोंसे रहित दो रत्नों अर्थात् सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञानके धारक अवधिज्ञानी तथा अवधिज्ञानसे रहित जीवोंको भी क्यों नही नमस्कार किया जाता ?

समाधान - अहंकारसे महान् जीवोंमें चरणाचार अर्थात् सम्यक् चारित्र रूप प्रवृत्ति करानेके लिये तथा प्रवृत्तिमार्गविषयक भक्तिके प्रकाशनार्थ उन्हें नमस्कार नहीं किया जाता है ।

इस प्रकार देशावधिजिनोंको नमस्कार करके परमावधिजिनोंको नमस्कार करनेके लिये उत्तर सूत्र कहते हैं -

परमावधिजिनोंको नमस्कार हो ॥ ३ ॥

परम शब्दका अर्थ ज्येष्ठ है । परम ऐसा जो अवधि वह परमावधि है ।

शंका - इस अवधिज्ञानके ज्येष्ठपना कैसे है ?

समाधान - चूंकि यह परमावधि ज्ञान देशावधिकी अपेक्षा महा विषयवाला है, मनःपर्ययज्ञानके समान संयत मनुष्योंमें ही उत्पन्न होता है, अपने उत्पन्न होनेके भवमें ही केवलज्ञानकी उत्पत्तिका कारण है, और अप्रतिपाती है अर्थात् सम्यक्त्व व चारित्रसे च्युत होकर मिथ्यात्व एवं असंयमको प्राप्त होनेवाला नहीं है; इसीलिये उसके ज्येष्ठपना सम्भव है ।

परमावधिरूप ऐसे वे जिन परमावधि जिन हैं । उनके लिये नमस्कार है ।

शंका - यदि देशावधि ज्ञानसे परमावधि ज्ञान ज्येष्ठ है तो इसको ही पहिले

जेट्ठ होदि तो एदस्सेव पुव्वं णमोक्कारो किण्ण कदो ? ण, देसोहीदो चेव परमोहिसरूवावगमो, ण अण्णहा त्ति जाणवणट्ठं देसोहीए पुव्वं णमोक्कारकरणादो, परमोहिसरूवावगमणिमित्तत्तणेण परमोहिं पेक्खिदूण महल्लत्तादो वा । कधं देसोहीदो परमोहिसरूवमवगम्मदे ? उच्चदे एत्थ सुत्तगाहा -

परमोहि असंखेज्जाणि लोगमेत्ताणि समयकालो दु ।
रूवगद लहइ दव्वं खेत्तोवमअगणिजीवेहि[1] ॥ १६ ॥

एदीए गाहाए परमोहिदव्व-खेत्त-काल-भावाणं परूवणा कदा । तं जहा- परमावधिरसंख्येयानि लोकमात्राणि लोकप्रमाणानि लभते जानातीत्यर्थः । एदेण खेत्तपमाणं

....

नमस्कार क्यों नहीं किया ?

समाधान - नहीं क्योंकि, देशावधिसे ही परमावधिके स्वरूपका ज्ञान होता है, अन्यथा नहीं होता; इस बातके ज्ञापनार्थ देशावधिको पूर्वमें नमस्कार किया है । अथवा परमावधिके स्वरूपके जाननेका निमित्त होनेसे परमावधिकी अपेक्षा चूंकि देशावधि महान् है, अतः उसे पहले नमस्कार किया है ।

शंका - देशावधिसे परमावधिके स्वरूपका ज्ञान कैसे होता है ?

समाधान - यहां सूत्र गाथा कहते हैं -

परमावधि उत्कृष्टसे क्षेत्रकी अपेक्षा असंख्यात लोकमात्र क्षेत्रको, कालकी अपेक्षा असंख्यात लोक मात्र समयरूप कालको जानता है । वही (शलाकाभूत) क्षेत्रोपम अग्निकायिक जीवोंसे परिच्छिन्न रूपगत द्रव्यको उत्कृष्टसे विषय करता है ॥ १६ ॥

विशेषार्थ - परमावधिका विषयभूत उत्कृष्ट क्षेत्र असंख्यात लोकप्रमाण है और उत्कृष्ट काल भी असंख्यात लोकमात्र ही है । उसीके विषयभूत उत्कृष्ट द्रव्यको जाननेके लिये यही प्रक्रिया है - तेजकायिक जीवकी जघन्य अवगाहनाको उसकी ही उत्कृष्ट अवगाहनामेंसे घटाकर शेषमें एक रूप मिला देनेपर जो प्राप्त हो उसे तेजकायिक राशिसे गुणा करनेपर शलाका राशि उत्पन्न होती है । अब देशावधिके उत्कृष्ट द्रव्यमें मनोवर्गणाके अनन्तवें भाग रूप ध्रुवहारका वार वार भाग देकर शलाका राशिमेंसे एक एक कम करते जाना चाहिये । इस प्रकार शलाका राशिके समाप्त होनेपर अन्तमें जो द्रव्यविकल्प प्राप्त होता है वह रूपगत है, और वही परमावधिका उत्कृष्ट विषय है । यही शलाका राशि परमावधिके विषयभूत क्षेत्र, काल एवं भावके विकल्पोंके जाननेमें भी निमित्त है ।

इस गाथा द्वारा परमावधिके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी प्ररूपणा की गई है, वह इस प्रकारसे-परमावधि असंख्यात लोक मात्र अर्थात् लोक प्रमाणोंको प्राप्त करता है, जानता है । इससे क्षेत्रप्रमाणकी प्ररूपणा की है । समय ऐसा जो काल वह समय -

....

१ महाबंध १, पृ. २२. परमोहि असंखेज्जा लोगमित्ता समा असंखिज्जा । रूवगयं लहइ सव्वं खेत्तोवमियं अगणिजीवा ॥ विशे. भा. ६८८ (नि. ४५).

परूविदं । 'समयकालो दु' समयश्चासौ कालश्च समयकालः । समयविसेसणं किमट्ठं? दव्वकालपडिसेहट्ठं । किमट्ठं दव्वकालपडिसेहो कीरदे ? तेणेत्थ पओजणाभावादो । दुसद्दो अविसद्दत्थे दट्ठव्वो । अवधेः समयकालोऽपि असंख्येयलोकमात्रः । एदेण परमोहीए उक्कस्सकाल-भावाणं परूवणा कदा । होदु कालपरूवणा एसा, ण भावपरूवणा; कालभावाणमेयत्तविरोहादो । ण एस दोसो, अदीदाणागयपज्जाया तीदाणागयकालो, वट्टमाणपज्जाया वट्टमाणकालो । तेसिं चेव भावसण्णा वि, 'वर्तमानपर्यायोपलक्षितं द्रव्यं भावः' इदि पओअदंसणादो । तीदाणागयकालेहिंतो वट्टमाणकालो भावसण्णिदो कालत्तणेण अभिण्णो त्ति काल-भावाणमेयत्ताविरोहादो । एदेण वक्खाणेण जहण्णपरमोहिकालो ण सूचिदो, सो कधं लब्भदे ? 'परमोहीए असंखेज्जासमयकालो' त्ति

....

काल है ।

शंका - यहां समय विशेषण किसलिये दिया है ?

समाधान - द्रव्य कालका प्रतिषेध करनेके लिये समय विशेषण दिया है ।

शंका - द्रव्य कालका प्रतिषेध किसलिये किया जाता है ?

तु शब्द अपि (भी) शब्दके अर्थमें जानना चाहिये । अवधिका समय रूप काल भी असंख्यात लोकमात्र है । इससे परमावधिके उत्कृष्ट काल और भावकी प्ररूपणा की है ।

शंका - यह कालप्ररूपणा भले ही हो, किन्तु भावप्ररूपणा नहीं हो सकती; क्योंकि, काल और भावकी एकताका विरोध है ?

समाधान - यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, अतीत और अनागत पर्यायें अतीत अनागत काल हैं, तथा वर्तमान पर्यायें वर्तमान काल हैं । उन्हीं पर्यायोंकी ही भाव संज्ञा भी है, क्योंकि, वर्तमान पर्यायसे उपलक्षित द्रव्य भाव है ऐसा प्रयोग देखा जाता है । अतीत और अनागत कालसे चूंकि भाव संज्ञावाला वर्तमान काल कालस्वरूपसे अभिन्न है, अतः काल और भावकी एकतामें कोई विरोध नहीं है ।

शंका - इस व्याख्यानसे जघन्य परमावधिका काल नहीं सूचित किया गया है, वह कैसे जाना जाता है ?

समाधान - 'परमावधिका असंख्यात समय-काल है', इस सूत्रसे वह जाना

....

१ स. सि. १, ५. त. रा. १, ५. ८.

सुत्तादो लब्भदे। खेत्तोवमअगणिजीवेहि, क्षेत्रोपमाश्च ते अग्निजीवाश्च क्षेत्रोपमाग्निजीवा; तेहि खेत्तोवमागणिजीवेहि सलागभूदेहि जं सिद्धं पोग्गलदव्वं तं लहदि जाणदि। रूवयद-विसेसणं किमट्ठं ? अरूविदव्वपडिसेहट्ठं। जदि रूविदव्वस्सेव एदेण परिच्छेदो कीरदि तो ण तीदाणागय-वट्टमाणपज्जायाणमेदेण परिच्छेदो कीरदे, तेसिं रूवित्ता-भावादो। तदभावो वि दव्वत्ताभावादो त्ति ? ण एस दोसो, तेसिं पि पोग्गलपज्जायाणं कथंचि रूविदव्वत्तसिद्धीदो। एसो रूवयदसद्दो मज्झदीवओ त्ति हेट्ठोवरिमोहिणाणेसु सव्वत्थ जोजेयव्वो। एदेण दव्वपरूवणा कदा।

संपहि एदीए गाहाए सूचिदत्थस्स णिण्णयट्ठमिमा परूवणा कीरदे। तं जहा- सुहुमतेउकाइयअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो। तं बादरतेउक्काइय-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणाए तत्तो असंखेज्जगुणाए सोहिय सुद्धसेसम्मि जहण्णोगाहणवियप्पागमणट्ठ रूवं पक्खिविय सामण्णतेउक्काइयरासिम्मि गुणिदे खेत्तो-

....

जाता है।

क्षेत्रोपम अग्नि जीव-क्षेत्रोपम ऐसे वे अग्नि जीव क्षेत्रोपम अग्नि जीव हैं। उन शलाकाभूत क्षेत्रोपम अग्नि जीवोंसे जो पुद्गल द्रव्य सिद्ध है उसे परमावधि प्राप्त करता है अर्थात् जानता है।

शंका - रूपगत विशेषण किस लिये दिया है ?

समाधान - अरूपी द्रव्यका प्रतिषेध करनेके लिये रूपगत विशेषण दिया है।

शंका - यदि इसके द्वारा केवल रूपी द्रव्यका ही ग्रहण किया जाता है तो फिर इससे अतीत, अनागत और वर्तमान पर्यायोंका ग्रहण नहीं किया जा सकेगा, क्योंकि, वे रूपी नहीं हैं। रूपीपनेका अभाव भी उनमें द्रव्यत्वके अभावसे है ?

समाधान - यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, वे भी पुद्गलद्रव्यकी पर्यायें हैं, इसलिये उनमें कथंचित् रूपी द्रव्यत्व सिद्ध हो जाता है।

यह रूपगत शब्द चूंकि मध्यदीपक है, अतएव इसे अधस्तन और उपरिम अवधिज्ञानोंमें सर्वत्र जोड लेना चाहिये। इस व्याख्यान द्वारा द्रव्यप्ररूपणा की गई है।

अब इस गाथा द्वारा सूचित अर्थके निर्णयार्थ यह प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है - सूक्ष्म तेजकायिक अपर्याप्तकी जघन्य अवगाहना अंगुलके असंख्यातवें भाग है। उसे उससे असंख्यातगुणी बादर तेजकायिक पर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहनामेंसे कम करके शेषमें जघन्य अवगाहनाके विकल्पोंको लानेके लिये एक रूपका प्रक्षेप करके सामान्य तेजकायिक राशिको गुणित करनेपर क्षेत्रोपम अग्नि जीवोंका प्रमाण होता है। यह परमावधिके द्रव्य, क्षेत्र,

वमअगणिजीवपमाणं होदि । एसो परमोहीए दव्व-खेत्त-काल भावाणं सलागरासि त्ति पुध ट्ठवेदव्वो । पुणो दो आवलियाए असंखेज्जदिभागा समसंखा, ते वि पुध ट्ठवेदव्वा । तत्थ दाहिणपासट्ठियस्स पडिगुणगारो अवट्ठिदगुणगारो त्ति दोण्णि णामाणि । तत्थ जो सो वामपासट्ठिदो तस्स खेत्तकालगुणगारो अणवट्ठिदगुणगारो त्ति दोण्णि णामाणि । एवं ठविय तदो देसोहिउक्कस्सदव्वमवट्ठिदविरलणाए समखंडं करिय दिण्णे तत्थ एगरूवधरिदं परमोहिजहण्णदव्वं होदि[1] । देसोहीए उक्कस्सभावे तप्पाओग्गअसंखेज्जरूवेहि गुणिदे परमोहीए जहण्णभावो होदि । देसोहीए उक्कस्सभावे लोगमणवट्ठिदगुणगारेण गुणिदे परमोहीए जहण्णं खेत्तं होदि । पुणो समऊणपल्लमुक्कस्सदेसोहिकालं तेणेव अणवट्ठिदगुणगारेण गुणिदे परमोहिजहण्णकालो होदि । सलागाहिंतो एगरूवमवणेदव्वं । पुणो परमोहिजहण्णदव्वमवट्ठिदविरलणाए समखंडं करिय दिण्णे तत्थ एगखंडं परमोहीए बिदियदव्ववियप्पो होदि । परमोहीए जहण्णभावं तप्पाओग्गअसंखेज्जरूवेहि गुणिदे तस्सेव बिदियवियप्पो होदि । पुणो परमोहिजहण्णखेत्तं पडिगुणगारेण गुणिदहेट्ठिमवियप्पगुणगारेण गुणिदे परमोहिखेत्तस्स बिदियवियप्पो होदि ।

....

काल और भावकी शलाका राशि है । अतः उसे पृथक् स्थापित करना चाहिये । पुनः समान संख्यावाले आवलीके दो असंख्यात भागोंको लेकर उन्हें भी पृथक् स्थापित करना चाहिये । उनमेंसे दाहिने पार्श्वमें स्थित राशिको प्रतिगुणकार व अवस्थित गुणकार इस प्रकार दो संज्ञायें हैं । उनमें जो वह वाम पार्श्वमें स्थित है उसके क्षेत्र-कालगुणकार और अनवस्थित गुणकार ये दो नाम हैं । इस प्रकार स्थापित करके पश्चात् देशावधिके उत्कृष्ट द्रव्यको अवस्थित विरलनासे समखण्ड करके देनेपर उनमें एक रूपधरित परमावधिका जघन्य द्रव्य होता है । देशावधिके उत्कृष्ट भावको उसके योग्य असंख्यात रूपोंसे गुणित करनेपर परमावधिका जघन्य भाव होता है । देशावधिके उत्कृष्ट क्षेत्र लोकको अनवस्थित गुणकारसे गुणित करनेपर परमावधिका जघन्य क्षेत्र होता है । पुनः एक समय कम पल्य रूप देशावधिके उत्कृष्ट कालको उसी अनवस्थित गुणकारसे गुणित करनेपर परमावधिका जघन्य काल होता है । शलाकाओंमेंसे एक रूप कम करना चाहिये । पुनः परमावधिके जघन्य द्रव्यको अवस्थित विरलनासे समखण्ड करके देनेपर उनमें एक खण्ड परमावधिका द्वितीय द्रव्यविकल्प होता है । परमावधिके जघन्य भावको उसके योग्य असंख्यात रूपोंसे गुणित करनेपर उसका ही द्वितीय विकल्प होता है । पुनः परमावधिके जघन्य क्षेत्रको प्रतिगुणकारसे गुणित अधस्तन विकल्पके गुणकारसे गुणित करनेपर परमावधिके क्षेत्रका द्वितीय विकल्प होता है । इसी गुणकारसे परमावधिके जघन्य

....

१ देसावहिवरदव्वं धुवहारेणवहिदे हवे णियमा । परमावहिस्स अवरं दव्वपमाणं तु जिणदिट्ठं ।। परमावहिस्स भेदा सगउग्गाहणवियप्पहदतेऊ । चरिमे हारपमाणं जेट्ठस्स य होदि दव्वं तु ।। गो. जी. ४१३-४१४.

पदेणेव गुणगारेण परमोहिजहण्णकाले गुणिदे कालस्स बिदियवियप्पो होदि । सलागासु एगरूवमवणेदव्वं । पुणो बिदियवियप्पजहण्णदव्वमवट्ठिदविरलणाए समखंडं करिय दिण्णे तत्थ एगखंडं तदियवियप्पदव्वं होदि । बिदियवियप्पभावे तप्पाओग्गअसंखेज्जरूवेहि गुणिदे तदियवियप्पभावो होदि । अवट्ठिदगुणगारगुणिदबिदियवियप्पगुणगारेण बिदियवियप्पखेत्त-काले गुणिदे तदियवियप्पखेत्त-काला होंति । सलागासु अण्णेगरूव-मवणेदव्वं । चउत्थ-पंचम-छट्ठ-सत्तमादिवियप्पाणमेवं चेव णेदव्वं । णत्थि एत्थ कोच्छि विसेसो । एवं गच्छमाणे अणवट्ठिदगुणगारो कम्हि उद्देसे घणलोगमेत्तो होदि त्ति वुत्ते वुच्चदे-आवलियाए असंखेज्जदिभागस्स छेदणएहि लोगछेदणए ओवट्टिय लद्धमेत्तद्धाणे गदे अणवट्ठिदगुणगारो लोगमेत्तो होदि, विरलणरासिमेत्तअवट्ठिद-गुणगाराणमण्णोण्णब्भत्थरासिस्स तत्थुवलंभादो । तदो प्पहुडि उवरि सव्वत्थ अणवट्ठिदगुणगारो असंखेज्जलोगमेत्तो होदि, वियप्पं पडि अवट्ठिदगुणगारेण गुणिज्जमाणत्तादो । एवं णेदव्वं जाव परमोहीए दुचरिमवियप्पो त्ति ।

संपधि चरिमवियप्पो उच्चदे-परमोहीए दुचरिमदव्वमवट्ठिदविरलणाए समखंडं

....

कालको गुणित करनेपर कालाका द्वितीय विकल्प होता है । शलाकाओंमेंसे एक रूप कम करना चाहिये । पुनः द्वितीय विकल्प रूप जघन्य द्रव्यको अवस्थित विरलनासे समखण्ड करके देनेपर उनमें एक खण्ड तृतीय विकल्प रूप द्रव्य होता है । द्वितीय विकल्प रूप भावको उसके योग्य असंख्यात रूपोंसे गुणित करनेपर तृतीय विकल्प रूप भाव होता है । अवस्थित गुणकारसे गुणित द्वितीय विकल्पके गुणकारसे द्वितीय विकल्पभूत क्षेत्र व कालको गुणित करनेपर तृतीय विकल्प रूप क्षेत्र व काल होते हैं । शलाकाओंमेंसे अन्य एक रूप कम करना चाहिये । चतुर्थ, पंचम, छठे और सातवें आदि विकल्पोंको इसी प्रकार ही ले जाना चाहिये, क्योंकि, यहां कोई भी विशेषता नहीं है ।

शंका - इस प्रकार जानेपर अनवस्थित गुणकार किस स्थानमें घनलोक मात्र होता है ?

समाधान - इस प्रकार पूछनेपर उत्तर कहते हैं - आवलीके असंख्यातवें भागके अर्धच्छेदोंसे लोकके अर्धच्छेदोंको अपवर्तित करके लब्ध मात्र अध्वान जानेपर अनवस्थित गुणकार लोक मात्र होता है, क्योंकि, विरलन राशि मात्र अवस्थित गुणकारोंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि वहां पायी जाती है ।

वहांसे लेकर ऊपर सर्वत्र अनवस्थित गुणकार असंख्यात लोक मात्र होता है, क्योंकि, प्रत्येक विकल्पके प्रति वह अवस्थित गुणकारसे गुणिज्यमान है । इस प्रकार परमावधिके द्विचरम विकल्प तक ले जाना चाहिये ।

अब अन्तिम विकल्पको कहते हैं - परमावधिके द्विचरम द्रव्यको अवस्थित विरलनासे

कारिय दिण्णे चरिमवियप्पो होदि । दुचरिमभावं तप्पाओग्गअसंखेज्जरूवेहि गुणिदे परमोहीए चरिमभावो होदि । परमोहीए असंखेज्जलोगमेत्तदुचरिमअणवट्ठिदगुणगार-मण्णेण आवलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिय तेण गुणिदरासिणा दुचरिमखेत्त-काले गुणिदे परमोहीए उक्कस्सखेत्तं उक्कस्सकालो च होदि । सलागासु एगरूवमवणिदे सव्वसलागाओ एत्थ णिट्ठिदाओ । खेत्तोवमअगणिजीवेहि देसोहिउक्कस्सदव्व-खेत्त-काल-भावाणं खंडण-गुणणवारसलागाहि साहिददव्व-खेत्त-काल-भावे उक्कस्सपरमोही जाणदि त्ति सिद्धं । तेण देसोहीए पुव्वं णमोक्कारो कदो, पच्छा परमोहीए ।

णमो सव्वोहिजिणाणं ।। ४ ।।

सर्वं विश्वं कृत्स्नमवधिर्मर्यादा यस्य स बोधः सर्वावधिः । एत्थ सव्वसद्दो सयलदव्ववाचओ ण घेत्तव्वो, परदो अविज्जमाणदव्वस्स ओहित्ताणुववत्तीदो । किंतु सव्वसद्दो सव्वेगदेसम्हि रूवयदे वट्टमाणो घेत्तव्वो । तेण सव्वरूवयदं ओही जिस्से त्ति संबंधो कायव्वो । अधवा, सरति गच्छति आकुंचन-विसर्पणादीनीति पुद्गलद्रव्यं सर्वं तमोही जिस्से सा

....

समखण्ड करके देनेपर अन्तिम द्रव्यविकल्प होता है । द्विचरम भावको उसके योग्य असंख्यात रूपोंसे गुणित करनेपर परमावधिका अन्तिम भाव होता है । परमावधिके असंख्यात लोक मात्र द्विचरम अनवस्थित गुणकारको अन्य आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणित उस गुणित राशिसे द्विचरम क्षेत्र और कालको गुणित करनेपर परमावधिका उत्कृष्ट क्षेत्र और उत्कृष्ट काल होता है । शलाकाओंमेंसे एक रूप कम करनेपर सब शलाकायें यहां समाप्त हो जाती हैं । क्षेत्रोपम अग्नि जीवोंसे देशावधिके उत्कृष्ट द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी खण्डन और गुणनरूप वारशलाकाओंसे साधे गये द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावको उत्कृष्ट परमावधि जानता है, यह सिद्ध हुआ । इसीलिये देशावधिको पूर्वमें नमस्कार किया है, पश्चात् परमावधिको ।

सर्वावधि जिनोंको नमस्कार हो ।। ४ ।।

विश्व और कृत्स्न ये सर्व समानार्थक शब्द हैं । सर्व है मर्यादा जिस ज्ञानकी वह सर्वावधि है । यहां सर्व शब्द समस्त द्रव्यका वाचक नहीं ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, जिसके परे अन्य द्रव्य न हो उसके अवधिपना नहीं बनता । किन्तु सर्व शब्द सबके एक देशरूप रूपी द्रव्यमें वर्तमान ग्रहण करना चाहिये । इसलिये सर्व रूपगत है अवधि जिसकी, इस प्रकार सम्बन्ध करना चाहिये, अथवा जो आकुंचन और विसर्पणादिकोंको प्राप्त हो वह पुद्गल द्रव्य सर्व है, वही जिसकी मर्यादा है वह सर्वावधि है ।

सव्वोही । असेससंसारिजीव-पोग्गलदव्वपरिच्छेदकारित्तादो परमोहिजिणेहिंतो महल्लाणं सव्वोहिजिणाणं किमिदि पुव्वमेव णमोक्कारो ण कदो ? ण, सव्वोहिमहल्लत्तावगमण-गुणेण सव्वोहीदो परमोहीए महल्लत्तं पेक्खिय तिस्से पुव्वं णमोक्कारविहाणादो । कधं परमोहीदो सव्वोहिमहल्लत्तमवगम्मदे ? उच्चदे - परमोहिउक्कस्सदव्वमवट्ठिदविरलणाए समखंडं करिय दिण्णे रूवं पडि एगेगो परमाणू पावदि, सो सव्वोहीए विसओ । एत्थ जहण्णुक्कस्स-तव्वदिरित्तवियप्पा णत्थि, सव्वोहीए एयवियप्पत्तादो[1] । परमोहिउक्कस्सभावं तप्पाओग्गअसंखेज्जरूवेहि गुणिदे सव्वोहीए उक्कस्सभावो होदि । परमोहिउक्कस्सखेत्तं तप्पाओग्गअसंखेज्जलोगेहि गुणिदे सव्वोहीए उक्कस्सखेत्तं होदि । सव्वोहिउक्कस्सखेत्तुप्पायणट्ठं परमोहिउक्कस्सखेत्तं तिस्से चेव चरिमअणवट्ठिदगुणगारेण आवलियाए असंखेज्जदिभागपदुप्पण्णेण गुणिज्जदि त्ति के वि भणंति । तण्ण घडदे, परियम्मे वुत्तओहिणिबद्धखेत्ताणुप्पत्तीदो । तं जहा-परमोहिखेत्तपमाणपरूवणा

....

शंका - चूंकि सर्वावधि जिन समस्त संसारी जीव और पुद्‌गल द्रव्यको जानते हैं, अतः परमावधिजिनोंकी अपेक्षा महान् होनेसे उन्हें ही पूर्वमें नमस्कार क्यों नहीं किया ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, सर्वावधिके महत्त्वका ज्ञान करने रूप गुणसे सर्वावधिसे परमावधिके महत्त्वको देखकर उसे पहिले नमस्कार किया है ।

शंका - परमावधिकी अपेक्षा सर्वावधिकी महत्ता कैसे जानी जाती है ?

समाधान - इस शंकाका उत्तर देते हैं - अवस्थित राशिप्रमाण विरलनके ऊपर परमावधिके उत्कृष्ट द्रव्यको समखण्ड करके देनेपर एक-एक अंकके प्रति जो एक एक परमाणु प्राप्त होता है, वह सर्वावधिका विषय है । इसके जघन्य, उत्कृष्ट और तद्‌व्यतिरिक्त भेद नहीं हैं, क्योंकि, सर्वावधि एक प्रकारका है । परमावधिके उत्कृष्ट भावको उसके योग्य असंख्यात रूपोंसे गुणित करनेपर सर्वावधिका उत्कृष्ट भाव होता है । परमावधिके उत्कृष्ट क्षेत्रको उसके योग्य असंख्यात लोकोंसे गुणित करनेपर सर्वावधिका उत्कृष्ट क्षेत्र होता है । सर्वावधिके उत्कृष्ट क्षेत्रको उत्पन्न करानके लिये परमावधिके उत्कृष्ट क्षेत्रको आवलीके असंख्यातवें भागसे उत्पन्न उसके ही अन्तिम अनवस्थित गुणकारसे गुणा किया जाता है, ऐसा कोई आचार्य कहते हैं । किन्तु वह घटित नहीं होता, क्योंकि, ऐसा माननेपर परिकर्ममें कहे हुए अवधिसे निबद्ध क्षेत्र नहीं बनता । वह इस प्रकारसे - पहले परमावधिके क्षेत्रके प्रमाणकी प्ररूपणा करते हैं,

....

१ सव्वावहिस्स एक्को परमाणू होदि णिव्वियप्पो सो । गो. जी. ४१५.

ताव कीरदे, अगणिकाइयओगाहणट्ठाणगुणिदअगणिकाइयजीवरासिं गच्छं काऊण एगादिएगुत्तरसंकलणमाणिदे तेउक्काइयरासिवग्गमइच्छिदूण तदुवरिमवग्गादो हेट्ठा एसो रासी उप्पज्जदि । एदं सलागसंकलणरासिं विरलेदूण आवलियाए असंखेज्जदिभागं रूवं पडि दादूण अण्णोण्णगुणं करिय देसोहिउक्कस्सखेत्तं घणलोगं गुणिदे परमोहिउक्कस्सखेत्तं होदि[१] । एदस्स अद्धाणगवेसणा कीरदे - विरलियरासिछेदणया दिण्णरासिछेदणयजुदा उप्पण्णरासिस्स वग्गसलागा होंति । विरलियरासिछेदणया णाम एत्थ तेउक्काइयाणमद्धच्छेदणेहिंतो दुगुणा सादिरेया, तेउक्काइयरासिवग्गवग्गादो हेट्ठा ट्ठिदरासिमद्धछेदणए कदे समुप्पण्णत्तादो । केहि एत्थ सादिरेयत्तं ? ओगाहणट्ठाण-वग्गद्धछेदणएहि दिज्जमाणरासिवग्गसलागाहि य । एदेसु पक्खित्तेसु आदिवग्गप्पहुडि परमोहिखेत्तस्स चडिदद्धाणं होदि, एदं चडिदद्धाणं तेउक्काइयरासिअद्धछेदणेहिंतो दुगुणसादिरेयमेत्तं तेउक्काइयरासिवग्गसलागाहि छिंदिय अद्धरूवूणेण तेउक्का-इयरासिवग्गसलागाओ गुणिदे तेउक्काइयरासीदो उवरि चडिदद्धाणं होदि । एदं

....

तेजकायिक जीवोंके अवगाहनास्थानोंसे गुणित तेजकायिक जीवोंकी राशिको गच्छ करके एकको आदि लेकर एक एक अधिक संकलनके (जैसे-प्रथम स्थानमें १, द्वि. मे १+२=३, तृ. में १+२+३=६, च. में १+२+३+४=१० इत्यादि) लानेपर तेजकायिक राशिके वर्गको लांघकर उससे उपरिम वर्गके नीचे यह राशि उत्पन्न होती है । इस शलाका संकलन राशिका विरलन करके आवलीके असंख्यातवें भागको प्रत्येक रूपके प्रति देकर परस्पर गुणित करके उससे देशावधिके उत्कृष्ट क्षेत्र घनलोकको गुणित करनेपर परमावधिका उत्कृष्ट क्षेत्र होता है । इसके अध्वानकी खोज करते हैं - देय राशिके अर्धच्छेदोंसे युक्त विरलित राशिके अर्धच्छेद उत्पन्न राशिकी वर्गशलाका होते हैं । विरलन राशिके अर्धच्छेद यहां तेजकायिक जीवोंके अर्धच्छेदोंसे कुछ अधिक दूने हैं, क्योंकि, वे तेजकायिक राशिके वर्गके वर्गसे नीचे स्थित राशिके अर्धच्छेद करनेपर उत्पन्न होते हैं ।

शंका - किनसे यहां अधिकता है, अर्थात् उस अधिकताका प्रमाण क्या है ?

समाधान - अवगाहनास्थानके वर्गके अर्धच्छेद और दीयमान राशिकी वर्गशलकाओंसे यहां अधिकता है ।

इनका प्रक्षेप करनेपर आदिके वर्गसे लेकर परमावधिके चढित अध्वान होता है । तेजकायिक राशिके अर्धच्छेदोंसे कुछ अधिक दुगणे मात्र इस चढित अध्वानको तेजकायिक राशिकी वर्गशलाकाओंसे खण्डित कर अर्ध रूप कम इससे तेजकायिक राशिकी वर्ग-शलाकाओंको गुणित करनेपर तेजकायिक राशिसे ऊपर चढित अध्वान होता है । यह परमा-

....

१ आवलिअसंखभागा इच्छिदगच्छवणमाणमेत्ताओ । देसावहिस्स खेत्ते काले वि य होंति संवग्गे ।। गो. जी. ४१७.

परमोहिउक्कस्सखेत्तं तेउक्काइयकायट्ठिदीदो थोवं, तेक्काइयअद्धच्छेदणेहिंतो दुगुण-सादिरेयमेत्तवग्गसलागत्तादो । तेउक्काइयकायट्ठिदी बहुआ, तेउक्काइयरासीदो उवरि असंखेज्जलोगमेत्तवग्गट्ठाणा गंतूणुप्पण्णवग्गसलागत्तादो । एदं परमोहिउक्कस्सखेत्तं तेउक्काइयकायट्ठिदीदो हेट्ठा । असंखेज्जलोगमेत्तवग्गट्ठाणाणि ओसरिय ट्ठियं आवलियाए असंखेज्जदिभागगुणिदपरमोहिचरिमअणवट्ठिदगुणगारेण गुणिदे ओहिणिबद्धखेत्तं ण उप्पज्जदि, परमोहिखेत्तस्स असंखेज्जदिभागेणेदेण गुणगारेण परमोहिखेत्ते गुणिदे तदुवरिमवग्गस्स वि अणुप्पत्तीदो । पुणो केद्देहो गुणगारो होदि त्ति वुत्ते वुच्चदे - परमोहिखेत्तेण तेउक्काइयकायट्ठिदि-ओहिणिबद्धखेत्तण्णोण्णगुणगारवग्गद्धछेदणयसलागाणमुवरि असंखेज्जलोगमेत्तवग्गट्ठाणाणिं गंतूण ट्ठिदओहिणिबद्धखेत्तम्मि भागे हिदे लद्धमेत्तो गुणगारो होदि, ण अण्णो; उत्तदोसप्पसंगादो । परमोहिकालं पि तप्पाओग्गअसंखेज्जरूवेहि गुणिदे सव्वोहिउक्कस्सकालो होदि । एसो एक्को चेव लोगो, परमोहि-सव्वोहीओ असंखेज्जलोगे जाणंति त्ति कधं घडदे ? ण एस दोसो, सव्वो पोग्गलरासी जदि

....

वधिका उत्कृष्ट क्षेत्र तेजकायिक जीवोंकी कायस्थितिसे स्तोक है, क्योंकि, तेजकायिक राशिके अर्धच्छेदोंसे कुछ अधिक दुगुणे प्रमाण उसकी वर्गशलाकायें हैं । तेजकायिकोंकी कायस्थिति बहुत हैं, क्योंकि, तेजकायिक राशिसे ऊपर असंख्यात लोक मात्र वर्गस्थान जाकर उसकी वर्गशलाकायें उत्पन्न होती हैं । तेजकायिकोंकी कायस्थितिसे नीचे असंख्यात लोक मात्र वर्गस्थानोंको छोडकर स्थित इस परमावधिके उत्कृष्ट क्षेत्रको आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणित परमावधिके अन्तिम अनवस्थित गुणकारसे गुणा करनेपर अवधिनिबद्ध क्षेत्र नहीं उत्पन्न होता, क्योंकि, परमावधिके क्षेत्रके असंख्यातवें भाग रूप इस गुणकारसे परमावधिके क्षेत्रको गुणित करनेपर उसका उपरिम वर्ग भी नहीं उत्पन्न होता ।

शंका - तो फिर कितना गुणकार है ?

समाधान - ऐसा पूछनेपर कहते हैं - परमावधिके क्षेत्रका तेजकायिकोंकी कायस्थिति और अवधिनिबद्ध क्षेत्रके परस्पर गुणकारके वर्गकी अर्धच्छेद शलाकाओंके ऊपर असंख्यात लोक मात्र वर्गस्थान जाकर स्थित अवधिनिबद्ध क्षेत्रमें भाग देनेपर जो लब्ध हो उतना मात्र गुणकार होता है, अन्य नहीं; क्योंकि, उक्त दोषका प्रसंग आता है ।

परमावधिके कालको उसके योग्य असंख्यात रूपोंसे गुणा करनेपर सर्वावधिका उत्कृष्ट काल होता है ।

शंका - यह एक ही लोक है, परमावधि और सर्वावधि असंख्यात लोकोंको जानते हैं, यह कैसे घटित होता है ?

समाधान - यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, यद्यपि सब पुद्‌गल राशि असंख्यात

असंखेज्जलोगे आवूरिऊण अवचिट्ठदि तो वि जाणंति त्ति तेसिं सत्तिप्पदंसणादो । परमोहि-सव्वोहीणं जिणत्ताविणाभाविणीणं किमट्ठं जिणविसेसणं कीरदे ? सच्चमेदं, किंतु एत्थ सव्व-परमोहीओ विसेसणं जिणा विसेसियं, अणेयपयाराणमाहारत्तादो । तेण ण दोसो त्ति सिद्धं । सर्वावधयश्च ते जिनाश्च सर्वावधिजिनाः तेभ्यो नमः ।

णमो अणंतोहिजिणाणं ।। ५ ।।

अणंते त्ति उत्ते उक्कस्सअणंतस्स गहणं, दव्वट्ठियणयावलंबणादो । सो उक्कस्साणंतो ओही जस्स सो अणंतोही । ओही णाम दो वत्थुणिबंधणा । ण च एत्थ उक्कस्साणंतादो बज्झं किं पि अत्थि, तम्हा उक्कस्साणंतस्स ओहित्तं ण जुज्जदि त्ति ? ण, ओही व ओहि त्ति उवयारेण उक्कस्साणंतस्स ओहित्तविरोहाभावादो । ओही किमुक्कस्सा-

....

लोकोंको भरकर स्थित हो तो भी वे जान सकते हैं । इस प्रकार उनकी शक्तिका प्रदर्शन किया गया है ।

शंका - जिनत्वके अविनाभाव रखनेवाले परमावधि और सर्वावधिको जिनका विशेषण किसलिये किया जाता है ?

समाधान - इस प्रकार शंकाकारका कहना सत्य है, किन्तु यहां सर्वावधि और परमावधि विशेषण हैं और जिन विशेष्य है, क्योंकि, वे अवधिज्ञानके अनेक प्रकारोंके आधार हैं; अतएव उक्त विशेषण-विशेष्य भावमें कोई दोष नहीं है, यह सिद्ध है ।

सर्वावधि रूप जो जिन हैं, उनके लिये नमस्कार हो ।

अनन्तावधि जिनोंको नमस्कार हो ।। ५ ।।

'अनन्त' इस प्रकार कहनेपर उत्कृष्ट अनन्तका ग्रहण है, क्योंकि, यहां द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन है । वह उत्कृष्ट अनन्त अवधि जिसके होती है वह अनन्तावधि है ।

शंका - अवधि यह नामकी अपेक्षा वस्तु निमित्तक संज्ञा है । और यहां उत्कृष्ट अनन्तसे बाह्य कुछ भी वस्तु नहीं है, अतः उत्कृष्ट अनन्तको अवधिपना उचित नहीं है ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, 'अवधिके समान जो है' वह अवधि है इस प्रकार उपचारसे उत्कृष्ट उनन्तको अवधि माननेमें कोई विरोध नहीं है ।

शंका - अवधि यह उत्कृष्ट अनन्तसे क्या पृथग्भूत है, अथवा उत्कृष्ट अनन्त ही अवधि

णंतादो पुधभूदा आहो उक्कस्साणंतो चेव ओहि त्ति ? ण पढमपक्खे, उक्कस्साणंतादो वदिरित्तदव्व-पज्जायाणमणुवलंभादो । ण च उक्कस्साणंतो चेव ओही, उक्कस्साणंतस्स दोसु वि पासेसु अण्णेसिमभावेण तस्स ओहित्तविरोहादो त्ति ? ण पढमपक्खो, अणब्भुवगमादो । ण बिदियपक्खुत्तदोसो वि संभवदि, अभिविहिग्गहणादो । ण च एक्कम्हि दुब्भावो विरुज्झदे, अणेयंते एक्कम्हि तदविरोहादो । अथवावयविणासाणं वाचओ अंतसद्दो घेत्तव्वो । ओही मज्जायां, उक्कस्साणंतादो पुधभूदा । अन्तश्च अवधिश्च अन्तावधी, न विद्येते तौ यस्य स अनन्तावधिः । अभेदाज्जीवस्यापीयं संज्ञा । अनन्तावधयश्च ते जिनाश्च अनन्तावधिजिनाः । तेभ्यो नमः ।

अणंतोहिजिणा णाम केवलणाणिणो, तदो ते सव्वजिणेहिंतो महल्ला । तेसिं पुव्वमेव णमोक्कारो किण्ण कदो ? ण, केवलणाणमहल्लत्तजाणावणगुणेण केवलणाणादो महल्लाए सव्वोहीए पुव्वमेव णमोक्कारकरणे विरोहाभावादो । मिच्छत्तादो सम्मत्तस्स माहप्पं जाणिज्जदि त्ति सम्मत्तभत्तीए मिच्छत्तस्स णमोक्कारो किण्ण कीरदे ? ण एस

....

है ? इनमें प्रथम पक्ष तो बनता नहीं है, क्योंकि, उत्कृष्ट अनन्तको छोडकर द्रव्य व उनकी पर्यायें नहीं पायी जाती । और उत्कृष्ट अनन्त अवधि ही हो सो भी नहीं है, क्योंकि, उत्कृष्ट अनन्तके दोनों ही पार्श्व भागोंमें अन्यका अभाव होनेसे उसे अवधि माननेमें विरोध है ? अर्थात उत्कृष्ट अनन्तसे कोई वस्तु बाहर नहीं है, इसलिये उसे अवधि नहीं मानना चाहिये ।

समाधान - शंकाकारने जिन दो पक्षोंमें दोष दिखाये हैं उनमेंसे प्रथम पक्ष तो है ही नहीं, क्योंकि, वैसा हम स्वीकार ही नहीं करते । द्वितीय पक्षमें कहा गया दोष भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, यहां अभिविधिको ग्रहण किया है । दूसरी बात यह है कि एक वस्तुमें द्वित्वका विरोध भी नहीं है, क्योंकि, अनेकान्तका आश्रय कर एकमें द्वित्वका अविरोध है । अथवा, यहां अवयविनाशोंका वाचक अन्त शब्द ग्रहण करना चाहिये । अवधिका अर्थ मर्यादा है । वह उत्कृष्ट अनन्तसे पृथग्भूत है । अन्त और अवधि जिसके नहीं हैं वह अनन्तावधि है । अभेद होनेसे जीवकी भी यह संज्ञा है । अनन्तावधिरूप जो जिन हैं वे अनन्तावधि जिन हैं, उनको नमस्कार हो ।

शंका - अनन्तावधिका जिन केवलज्ञानी होते हैं, इसलिये वे सब जिनोंसे महान् होते हैं । उनको पहले ही नमस्कार क्यों नहीं किया ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, केवलज्ञानके माहात्म्यका ज्ञान करानेरूप गुणकी अपेक्षा केवलज्ञानसे सर्वावधि महान् है । अतएव उन्हें पहले ही नमस्कार करनेमें कोई विरोध नहीं है ।

शंका - मिथ्यात्वसे चूंकि सम्यक्त्वका माहात्म्य जाना जाता है, अतः सम्यक्त्वकी भक्ति की अपेक्षा मिथ्यात्वको नमस्कार क्यों नहीं किया जाता है ?

समाधान - यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जिस प्रकार मति, श्रुत और अवधि

दोसो, जहा मदि-सुद-ओहिणाणेहिंतो केवलणाणमाहप्पमवगम्मदे तहा मिच्छत्तादो सम्मत्तमाहप्पस्स अवगमाभावादो । ण च जो जस्स भत्तो मित्तो वा सो तव्विरोहीणं भत्तिं कुणइ, विरोहादो । पच्छाणुपुव्विकमप्पदंसणट्ठं वा देसोहिजिणादीणं पुव्वं णमोक्कारो कदो । संपधि सुद-मण-पज्जवणाणतवाइं मदिणाणपुव्वा इदि कट्टु मइणाणम्मि समुप्पण्णसद्धो गोदमभडारओ उत्तरसुत्तेहि मदिवाणीणं णमोक्कारं कुणदि-

णमो कोट्ठबुद्धीणं ।। ६ ।।

कोष्ठः शालि-व्रीहि-यव-गोधूमादीनामाधारभूतः कुस्थली पल्यादिः । सुदास-सदव्वपज्जायधारणगुणेण कोट्ठसमाणा बुद्धी कोट्ठा, कोट्ठा च सा बुद्धी च कोट्ठबुद्धी[1] । एदि से अत्थधारणकालो जहण्णेण संखेज्जाणि उक्कस्सेण

....

ज्ञानोंसे केवलज्ञानका माहात्म्य जाना जाता है उस प्रकार मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वका माहात्म्य नहीं जाना जाता । दूसरे, जो जिसका भक्त अथवा मित्र होता है वह उसके विरोधियोंकी भक्ति नहीं करता है, क्योंकि, ऐसा करनेमें विरोध है । अथवा, पश्चादानुपूर्वी अर्थात् विपरीत क्रम दिखलानेके लिये देशावधि जिनादिकोंको पूर्वमें नमस्कार किया है ।

अब श्रुत और मनःपर्यय ज्ञान तथा तप आदि चूंकि मतिज्ञानपूर्वक होते हैं अतः मतिज्ञानमें उत्पन्न हुई श्रद्धासे युक्त गौतम भट्टारक उत्तर सूत्रोंके द्वारा मतिज्ञानियोंको नमस्कार करते हैं -

कोष्ठबुद्धि धारक जिनोंको नमस्कार हो ।। ६ ।।

शालि, व्रीहि, जौ और गेहूं आदिके आधारभूत कोथली, पल्ली आदिका नाम कोष्ठ है । श्रुतज्ञानसम्बन्धी समस्त द्रव्य व पर्यायोंको धारण करनेरूप गुणसे कोष्ठके समान होनेसे उस बुद्धिको भी कोष्ठ कहा जाता है । कोष्ठरूप जो बुद्धि वह कोष्ठबुद्धि है । इसके अर्थको धारण करनेका काल जघन्यसे संख्यात वर्ष और उत्कृष्टसे असंख्यात वर्ष है, क्योंकि, असंख्यात और

....

१ उक्करिसधारणाए जुत्तो पुरिसो गुरूवएसेणं । णाणाविहगंथेसुं वित्थारे लिंगसद्दबीजाणि ।। गहिऊण णियमदीए मिस्सेण विणा धरेवि मदिकोट्ठे । जो कोइ तस्स बुद्धी णिद्दिट्ठा कोट्ठबुद्धि त्ति ।। ति. प. ४, ९७८, ९७९. कोष्ठागारिकस्थापितानामसंकीर्णानामविनष्टानां भूयसां धान्यबीजानां यथा कोष्ठेऽवस्थानं तथा परोपदेशादनवधारितानामर्थग्रन्थ-बीजानां भूयसामव्यतिकीर्णानां कोष्ठबुद्धिः । त. रा. ३,३६,२. कोट्ठयधन्नसुनिग्गलसुत्तत्था कोट्ठबुद्धीया ।। प्रवचनसारोद्धार १५०२

असंखेज्जाणि वासाणि । कुदो ? 'कालमसंखं संखं च धारणा' त्ति सुत्तुवलंभादो । कुदो एदं होदि ? धारणावरणीयस्स कम्मस्स तिव्वखओवसमादो । बुद्धिमंताणं पि कोट्ठबुद्धी सण्णा, गुण-गुणीणं भेदाभावादो । जिणसद्दो उवरि सव्वत्थ पवाहसरूवेण अणुवट्टावेदव्वो, अण्णहा सुत्तट्ठाणुववत्तीदो । जदि जिणसद्दो अणुवट्टदे तो देस-परम-सव्वाणंतोहिकिदियम्मसुत्तेसु किमट्ठं जिणसद्दो उच्चदे ? ण, तदणुवुत्तिप्पदंसणट्ठं तत्थ तदुत्तीदो । तदो णमो कोट्ठबुद्धीणं जिणाणमिदि सिद्धं । धारणामदिणाणजिणाणं णमोक्कारो किण्ण कदो ? ण, कोट्ठबुद्धीए अवगाहिदासेसधारणाणाणवियप्पाए णमोक्कारे कदे सव्वधारणाणाणाणं णमोक्कारसिद्धीदो । मदिणाणादो ओहि-केवलणाणाणं विसयविसेसावगमादो तदुप्पत्तिकारणादो च पुव्वमेव मदिणाणीणं णमोक्कारो किण्ण कीरदे ?

....

संख्यात काल तक धारणा रहती है', ऐसा सूत्र पाया जाता है ।

शंका - यह किस कारणसे होता है ?

समाधान - धारणावरणीय कर्मके तीव्र क्षयोपशमसे होता है ।

उक्त बुद्धिके धारकोंकी भी कोष्ठबुद्धि संज्ञा है, क्योंकि, गुण और गुणीमें सर्वत्र भेद नहीं है । जिन शब्दकी आगे सर्वत्र प्रवाह रूपसे अनुवृत्ति कर लेना चाहिये, क्योंकि, उसके विना सूत्रोंका अर्थ नहीं बनता ।

शंका - यदि जिन शब्दकी अनुवृत्ति होती है तो फिर देशावधि, परमावधि, सर्वावधि और अनन्तावधि कृतिकर्मप्ररूपक सूत्रोंमें जिन शब्दका उच्चारण किसलिये किया जाता है ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, जिन शब्दकी अनुवृत्तिको दिखलानेके लिये वहां जिन शब्दका उच्चारण किया जाता है । इसलिये कोष्ठबुद्धि धारक जिनोंको नमस्कार हो यह सिद्ध हुआ ।

शंका - धारणामतिज्ञानी जिनोंको नमस्कार क्यों नहीं किया ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, समस्त धारणाज्ञानके विकल्पोंका अवगाहन करनेवाली कोष्ठबुद्धिको नमस्कार करनेपर सब धारणाज्ञानियोंको नमस्कार सिद्ध है ।

शंका - मतिज्ञानसे अवधि और केवल ज्ञानके विषयकी विशेषताका ज्ञान होनेसे तथा उनकी उत्पत्तिका कारण होनेसे पहले ही मतिज्ञानियोंको नमस्कार क्यों नहीं करते ?

ण गोदमथेराणमेत्थ एवंविहभावाभावादो । तदभावो कुदोऽवगम्मदे ? मदिणाणीणं पुव्वं किदिकम्माकरणादो । परोक्खं मदिणाणं, ओहि-केवलाणि पच्चक्खाणि; इंदियजं मदिणाणं, ओहि-केवलणाणाणि अणिंदियाणि त्ति मदिणाणादो ओहि-केवलणाणमाहप्पं पेक्खिय तेसिमग्गपूजा कदा । गोदमथेरस्स एसो अहिप्पाओ त्ति कधं णव्वदे ? अहिप्पायाविणाभावि-वयणकज्जादो । बीजबुद्धिआदीणमग्गपूजा किण्ण कदा ? ण, तत्तो धारणाए गुणगरिमुवलंभादो । कुदो ? धारणाए विणा बीजबुद्धिआदीणं विहलत्तुवलंभादो ।

णमो बीजबुद्धीणं ।। ७ ।।

जिणाणमिदि अणुवट्टदे । तदो णमो बीजबुद्धीणं जिणाणमिदि एद्दहं सुत्तमिदि

....

समाधान - नहीं क्योंकि, गौतम स्थविरका यहां ऐसा भाव नहीं है ।

शंका - उनका ऐसा भाव नहीं है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान - मतिज्ञानियोंका पहले कृतिकर्म नहीं करनेसे उनके उक्त भावका अभाव जाना जाता है । मतिज्ञान परोक्ष है, किन्तु अवधि और केवलज्ञान प्रत्यक्ष हैं; मतिज्ञान इन्द्रियजन्य है और अवधि व केवलज्ञान अतीन्द्रिय हैं; इस प्रकार मतिज्ञानसे अवधि और केवलज्ञानके माहात्म्यकी अपेक्षा करके उनकी पहले पूजा की है ।

शंका - गौतम स्थविरका ऐसा अभिप्राय रहा है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान - उक्त अभिप्रायके अविनाभावी वचनरूप कार्यसे वह जाना जाता है ।

शंका - बीजबुद्धि आदिके धारकोंकी पहले पूजा क्यों नहीं की ?

समाधान - नहीं की, क्योंकि, बीजबुद्धि आदिकी अपेक्षा धारणाका गुणगौरव अधिक पाया जाता है । कारण कि धारणाके विना बीजबुद्धि आदिकोंकी विफलता देखी जाती है ।

बीजबुद्धि धारक जिनोंको नमस्कार हो ॥ ७ ॥

यहां 'जिनोंको' इस पदकी अनुवृत्ति होती है । इस कारण बीजबुद्धि धारक जिनोंको नमस्कार हो, इस प्रकार इतना सूत्र है; ऐसा ग्रहण करना चाहिये । बीजके समान बीज

घेत्तव्वं । बीजमिव बीजं । जहा बीजं मूलंकुर-पत्त-पोर-कंद-पसव-तुस-कुसुम-खीरतंदुलादीणमाहारं तहा दुवालसंगत्थाहारं जं पदं तं बीजतुल्लत्तादो बीजं । बीजपदविसयमदिणाणं पि बीजं, कज्जे कारणोवयारादो । संखेज्जसद्दअणंतत्थपडिबद्धअणंतलिंगेहि सह बीजपदं जाणंती बीजबुद्धि त्ति भणिदं होदि[1] । ण बीजबुद्धी अणंतत्थपडिबद्ध-अणंतलिंगबीजपदमवगच्छदि, खओवसमियत्तादो त्ति ? ण[2], खओवसमिएण परोक्खेण केवलणाणविसईकयाणंतत्थाणं जहा परिच्छेदो कीरदे परोक्खसरूवेण, तहा मदिणाणेण वि अणंतत्थपरिच्छेदो सामण्णसरूवेण कीरेद; विरोहाभावादो । जदि सुदणाणिस्स विसओ अणंतसंखा होदि तो जमुक्कस्ससंखेज्जं विसओ चोद्दसपुव्विस्से त्ति परियम्मे उत्तं तं कधं घडदे ? ण एस दोसो, उक्कस्ससंखेज्जं चेव जाणदि त्ति तत्थ णियमा-

....

कहा जाता है । बीजके समान जो होता है वह बीज कहा जाता है । जिस प्रकार बीज मूल, अंकुर, पत्र, पोर, स्कन्ध, प्रसव, तुष, कुसुम, क्षीर और तंदुल आदिकोंका आधार है उसी प्रकार बारह अंगोंके अर्थका आधारभूत जो पद है वह बीज तुल्य होनेसे बीज है । बीज पदविषयक मतिज्ञान भी कार्यमें कारणके उपचारसे बीज है । संख्यात शब्दोंद्वारा अनन्त अर्थोंसे सम्बद्ध अनन्त लिंगोंके साथ बीज पदकी जाननेवाली बीजबुद्धि है, यह तात्पर्य हैं ।

शंका - बीजबुद्धि अनन्त अर्थोंसे सम्बद्ध अनन्त लिंगरूप बीजपदको नहीं जानती, क्योंकि वह क्षायोपशमिक है ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, जिस प्रकार क्षायोपशमिक परोक्ष श्रुतज्ञानके द्वारा केवलज्ञानसे विषय किये गये अनन्त अर्थोंका परोक्ष रूपसे ग्रहण किया जाता है, उसी प्रकार मतिज्ञानके द्वारा भी सामान्य रूपसे अनन्त अर्थोंको ग्रहण किया जाता है, क्योंकि, इसमें कोई विरोध नहीं है ।

शंका - यदि श्रुतज्ञानका विषय अनन्त संख्या है तो चौदहपूर्वीका विषय उत्कृष्ट संख्यात है, ऐसा जो परिकर्ममें कहा है वह कैसे घटित होगा ?

समाधान - यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उत्कृष्ट संख्यातको ही जानता है, ऐसा यहां

....

१ णोइंदियसुदणाणावरणाणं वीरअंतरायाए । तिविहाणं पगदीणं उक्कस्सखउवसमविसुद्धपसं ।। संखेंज्जसरूवाणं सद्दाणं तत्थ लिंगसंजुत्तं । एक्कं चिय बीजपदं लद्दूण परोपदेसेणं । तम्मि पदे आधारे सयलसुदं चिंतिऊण गेण्हेदि । कस्स वि महेसिणो जा बुद्धी सा बीजबुद्धि त्ति ।। ति. प. ४, ९७५-९७७. सुकृष्टसमुथान्विते (सुमथिते) क्षेत्रे सारवति कालादिसहायापेक्षं बीजमेकमुप्तं यथानेकबीजकोटिप्रदं भवति तथा नोइन्द्रियावरण-श्रुतावरणवीर्यान्तरायक्षयोपशमप्रकर्षे सति एकबीजपदग्रहणादनेकपदार्थप्रतिपत्तिर्बीजबुद्धिः । त. रा. ३,३६,२. जो अत्थपएणऽत्थं अणुसरइ स बीयवुद्धी ओ (उ) ।। प्रवचनसारोद्धार १५०३.

२ अप्रतौ 'ण' इति पदं नोपलभ्यते ।

भावादो । णासेसपयत्था सुदणाणेण परिच्छिज्जंति,

पण्णवणिज्जा भावा अणंतभागो दु अणभिलप्पाणं ।
पण्णवणिज्जाणं पुण अणंतभागो सुदणिबद्धो[१] ॥ १७ ॥

इदि वयणादो त्ति उत्ते होदु णाम सयलपयत्थाणमणंतिमभागो दव्वसुदणाणविसओ, भावसुदणाणविसओ पुणसयलपयत्था; अण्णहा तित्थयराणं वागदिसयत्थाभावप्पसंगादो । बीजपदपरिच्छेदकारिणी बीजबुद्धि त्ति-सिद्धं । बीजपदट्ठिदपदेसादो हेट्ठिमसुद-णाणुप्पत्तीए कारणं होदूण पच्छा उवरिमसुदणाणुप्पत्तिणिमित्ता बीजबुद्धि त्ति के वि आइरिया भणंति । तण्ण घडदे, कोट्ठबुद्धियादिचदुण्हं णाणाणमक्कमेणेक्कम्हि जीवे सव्वदा अणुप्पत्तिप्पसंगादो । तं कधं ? बीजबुद्धिसहिदजीवे ण ताव अणुसारी पडिसारी

....

नियम नहीं है ।

शंका - श्रुतज्ञान समस्त पदार्थोंको नहीं जानता है, क्योंकि,

वचनके अगोचर ऐसे जीवादिक पदार्थोंके अनन्तवें भाग प्रज्ञापनीय अर्थात् तीर्थंकरकी सातिशय दिव्य ध्वनिमें प्रतिपाद्य होते हैं । तथा प्रज्ञापनीय पदार्थोंके अनन्तवें भाग प्रमाण द्वादशांग श्रुतमें निबद्ध किये जाते हैं ॥ १७ ॥

इस प्रकारका वचन है ।

समाधान - इस शंकाके उत्तरमें कहते हैं कि समस्त पदार्थोंका अनन्तवां भाग द्रव्य श्रुतज्ञानका, विषय भले ही हो, किन्तु भाव श्रुतज्ञानके विषय तो समस्त पदार्थ है; क्योंकि, ऐसा माने बिना तीर्थंकरोंके वचनातिशयमें अर्थके अभावका प्रसंग आता है । उनके वचनकी सार्थकता नहीं बनती इसलिये बीजपदोंका ज्ञान करानेवाली बीजबुद्धि है, यह सिद्ध हुआ ।

बीजपदस्थित प्रदेशसे अधस्तन श्रुत ज्ञानकी उत्पत्तिका कारण होकर पीछे उपरिम श्रुत ज्ञानकी उत्पत्तिमें निमित्त होनेवाली बीजबुद्धि है, ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं । किन्तु वह घटित नहीं होता, क्योंकि, ऐसा माननेपर कोष्ठबुद्धि आदि चार ज्ञानोंकी युगपत् एक जीवमें सर्वदा उत्पत्ति न हो सकनेका प्रसंग आता है ।

शंका - वह कैसे ?

समाधान - बीजबुद्धि सहित जीवमें न तो अनुसारी बुद्धि सम्भव है और न प्रतिसारी बुद्धि सम्भव ।

....

१ गो. जी. ३३४. विशे. भा. १४१.

वा संभवदि, उहयदिसाविसयसुदणाणजणणक्खमबीजबुद्धिमहिट्ठिदजीवे बीजबुद्धिविरुद्धाण-मणु पडिसारीणमवट्ठाणविरोहादो । णोभयसारी वि, हेट्ठिमसुदणाणुप्पत्तीए कारणमहोदूणुवरिमसुदणाणुप्पत्तीए कारणं ण होदि त्ति णियमपडिबद्धबीजबुद्धिमहिट्ठिदजीवे अणियमेणुहयदिसाविसयसुदणाणुप्पायणसहावोभयसारिबुद्धीए अवट्ठाणविरोहादो । ण च एक्कम्हि जीवे सव्वदा चदुण्हं बुद्धीणं अक्कमेण अणुप्पत्ती चेव,

बुद्धि तवो वि य लद्धी विउव्वणलद्धी तहेव ओसहिया ।
रस-बल-अक्खीणा वि य लद्धीओ सत्त पण्णत्ता ॥ १८ ॥

एत्थगाहाए वक्खाणम्मि गणहरदेवाणं चदुरमलबुद्धीणं दंसणादो । किं च अत्थि गणहरदेवेसु चत्तारि बुद्धीओ, अण्णहा दुवालसंगाणमणुप्पत्तिप्पसंगादो । तं कधं ? ण तत्थ कोट्ठबुद्धीए अभावो, उप्पण्णसुदणाणस्स अवट्ठाणेण विणा विणासप्पसंगादो । ण बीजबुद्धीए अभावो, ताए विणा अणवगयतित्थयरवयणविणिग्गयअक्खराणक्खर-

....

क्योंकि, उभय (अधस्तन व उपरिम) दिशा विषयक श्रुतज्ञानके उत्पन्न करनेमें समर्थ ऐसी बीजबुद्धिको प्राप्त जीवमें बीजबुद्धिके विरुद्ध अनुसारी और प्रतिसारी बुद्धियोंके अवस्थानका विरोध है । उभयसारी बुद्धि भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, वह अधस्तन श्रुतज्ञानकी उत्पत्तिका कारण नहीं होती है ऐसे नियममें प्रतिबद्ध बीजबुद्धि युक्त जीवमें अनियमसे उभय दिशा विषयक श्रुतज्ञानको उत्पन्न करनेका स्वभाववाली उभयसारी बुद्धिके अवस्थानका विरोध है । और एक जीवमें सर्वदा चार बुद्धियोंकी एक साथ उत्पत्ति हो ही नहीं, ऐसा है नहीं, क्योंकि,

बुद्धि, तप, विक्रिया, औषधि, रस, बल और अक्षीण, इस प्रकार ऋद्धियां सात कही गई हैं ॥ १८ ॥

यहाँपर उक्तगाथाके व्याख्यानमें गणधर देवोंके चार निर्मल बुद्धियां देखी जाती हैं । दूसरी बात यह है कि गणधर देवोंके चारों बुद्धियां होती हैं, क्योंकि, उनके विना बारह अंगोंकी उत्पत्ति न हो सकनेका प्रसंग आता है ।

शंका - बारह अंगोंकी उत्पत्ति न हो सकनेका प्रसंग कैसे आता है ?

समाधान - गणधर देवोंमें कोष्ठबुद्धिका अभाव तो नहीं हो सकता, क्योंकि, ऐसा होनेपर अवस्थानके विना उत्पन्न हुए श्रुतज्ञानके विनाशका प्रसंग आता है । बीजबुद्धिका अभाव नहीं हो सकता, क्योंकि, उसके विना गणधर देवोंको तीर्थंकरके मुखसे निकले हुए अक्षर

प्पयबहुलिंगालिंगियबीजपदाणं गणहरदेवाणं दुवालसंगाभावप्पसंगादो । बीजपदसरूवावगमो बीजबुद्धी, तत्तो दुवालसंगुप्पत्ती । ण च ताए विणा तमुप्पज्जदि, अइप्पसंगादो । ण च तत्थ पदाणुसारिसण्णिदणाणाभावो, बीजबुद्धीए अवगयणरूवेहिंतो कोट्ठबुद्धीए पत्तावट्ठाणेहिंतो बीजपदेहिंतो ईहावाएहि विणा बीजपदुभयदिसाविसयसुदणाणक्खर-पद-वक्क-तदट्ठविसयसुदणाणुप्पत्तीए अणुवत्तीदो । ण संभिण्णसोदारत्तस्स अभावो, तेण विणा अक्खराणक्खरप्पाए सत्तसदट्ठारसकुभास-भाससरूवाए णाणाभेदभिण्णबीजपदसरूवाए पडिक्खणमण्णभावमुवगच्छंतीए दिव्वज्झुणीए गहणाभावादो दुवालसंगुप्पत्तीए अभावप्पसंगादो त्ति । तम्हा बीजपदसरूवावगमो बीजबुद्धि त्ति सिद्धं । तत्तो भेदाभावादो जीवो वि बीजबुद्धी । तेसिंवि बीजबुद्धीणं जिणाणं णमो इदि वुत्तं होदि । एसा कुदो होदि ? विसिट्ठोग्गहावरणीयक्खओवसमादो ।

णमो पदाणुसारीणं ।। ८ ।।

....

और अनक्षर स्वरूप बहुत लिंगालिंगिक बीजपदोंका ज्ञान न होनेसे द्वादशांगके अभावका प्रसंग आता है । बीजपदोंके स्वरूपका जानना बीजबुद्धि है, उससे द्वादशांगकी उत्पत्ति होती है । और उस बीजबुद्धिके विना द्वादशांगकी उत्पत्ति हो नहीं सकती, क्योंकि, ऐसा होनेमें अतिप्रसंग आता है । उनमें पदानुसारी नामक ज्ञानका अभाव नहीं है, क्योंकि, बीजबुद्धिसे जाना है स्वरूप जिनका तथा कोष्ठबुद्धिसे प्राप्त किया है अवस्थान जिन्होंने ऐसे बीजपदोंसे ईहा और अवायके विना बीजपदकी उभय दिशा विषयक श्रुतज्ञान तथा अक्षर, पद, वाक्य और उनके अर्थ विषयक श्रुतज्ञानकी उत्पत्ति बन नहीं सकती । उनमें संभिन्नश्रोतृत्वका अभाव नहीं है, क्योंकि, उसके विना अक्षरानक्षरात्मक, सात सौ कुभाषा और अठारह भाषा स्वरूप, नाना भेदोंसे भिन्न बीजपदरूप, व प्रत्येक क्षणमें भिन्न भिन्न भाव प्राप्त होनेवाली ऐसी दिव्यध्वनिका ग्रहण न होनेसे द्वादशांगकी उत्पत्तिके अभावका प्रसंग आता है ।

इस कारण बीजपदोंके स्वरूपका जानना बीजबुद्धि है, ऐसा सिद्ध हुआ । उक्त बुद्धिसे भिन्न न होनेके कारण जीव भी बीजबुद्धि है । उन बीजबुद्धिके धारक जिनोंको नमस्कार हो, यह सूत्रका अभिप्राय है ।

शंका - यह बीजबुद्धि किस कारणसे होती है ?

समाधान - वह विशिष्ट अवग्रहावरणीयके क्षयोपशमसे होती है ।

पदानुसारी ऋद्धिके धारक जिनोंको नमस्कार हो ॥ ८ ॥

एत्थ जिणसद्दोऽणुवट्टदे, तेण णमो पदाणुसारीणं जिणाणमिदि वत्तव्वं। पमाणमज्झिमादिपदेहि एत्थ पओजणाभावादो बीजपदस्स गहणं। पदमनुसरति अनुकुरुते इति पदानुसारी बुद्धिः। बीजपदमवगंतूण एत्थ इदं एदेसिमक्खराणं लिंगं होदि ण होदि त्ति ईहिदूण सयलसुदक्खर-पदाइमवगच्छंती पदाणुसारी। तेहि पदेहिंतो समुप्पज्जमाणं णाणं सुदणाणं ण अक्खर-पदविसयं, तेसिमक्खर-पदाणं बीजपदंतब्भावादो। सा च पदाणुसारी अणु-पदि-तदुभयसारिभेदेण तिविहो। बीजपदादो हेट्ठिमपदाइं चेव बीजपदट्ठियलिंगेण जाणंती[1] पदिसारी णाम। उवरिमाणि चेव जाणंती अणुसारी णाम। दोपासट्ठियपदाइं णियमेण विणा णियमेण वा जाणंती उभयसारी णाम[2]। एदेसिं पदाणुसारिजिणाणं णिसुढिय णिवदिदो किदियम्मं करेमि त्ति भणिदं होदि।

यहां जिन शब्दकी अनुवृत्ति आती है, इसलिये पदानुसारी ऋद्धिधारक जिनोंको नमस्कार हो, ऐसा कहना चाहिये। प्रमाण और मध्यम आदि पदोंसे यहां प्रयोजन न होनेके कारण बीजपदका ग्रहण किया है। पदका जो अनुसरण अर्थात् अनुकरण करती है वह पदानुसारी बुद्धि है। बीजबुद्धिसे बीजपदको जानकर यहां यह इन अक्षरोंका लिंग होता है और इनका लिंग नहीं होता इस प्रकार विचार कर समस्त श्रुतके अक्षर और पदोंको जाननेवाली पदानुसारी बुद्धि है। उन पदोंसे उत्पन्न होनेवाला ज्ञान श्रुतज्ञान है, वह अक्षर-पदविषयक नहीं; क्योंकि, उन अक्षर और पदोंका बीजपदमें अन्तर्भाव हो जाता है। वह पदानुसारी बुद्धि अनुसारी, प्रतिसारी और तदुभयसारीके भेदसे तीन प्रकारकी है। जो बीजपदसे अधस्तन पदोंको ही बीजपदस्थित लिंगसे जानती है वह प्रतिसारी बुद्धि है। जो उपरिम पदोंको ही जानती है वह अनुसारी बुद्धि है। दोनों पार्श्वस्थ पदोंको नियमसे अथवा विना नियमके भी जो जानती है वह उभयसारी बुद्धि है। इन पदानुसारी जिनोंको नत होकर, भूमिपतित होकर कृतिकर्म करता हूं यह सूत्रका अभिप्राय है।

१ बुद्धी बियक्खणाणं पदाणुसारी हवेदि तिविहप्पा। अणुसारी पडिसारी जहत्थणामा उभयसारी॥ आदिअवसाण-मज्झे गुरूवदेसेण एक्कबीजपदं। गेण्हिय उवरिमगंथं जा गिण्हदि सा मदी हु अणुसारी॥ आदिअवसाण-मज्झे गुरूवदेसेण एक्कबीजपदं। गेण्हिय हेट्ठिमगंथं बुज्झदि जा सा च पडिसारी॥ णियमेण अणियमेण य जुगवं एगस्स बीजसद्दस्स। उवरिम-हेट्ठिमगंथं जा बुज्झइ उभयसारी सा। ति. प. ४, ९८०-९८३. पदानुसारित्वं त्रेधा-अनुश्रोतः प्रतिश्रोतः उभयथा चेति। एकं पदस्यार्थं परतः अपश्रुत्यादौ अन्ते च मध्ये वा शेषग्रन्थार्थावधारणं पदानुसारित्वम्॥ त. रा. ३, ३६, २. जो सुत्तपएण बहुं सुयमणुधावइ-पयाणुसारो सो। प्रवचनसारोद्धार १५०३.